6

आयुर्वेदिक स्वस्थ वृत्त

'स्वस्थस्य स्वास्थ्यरक्षणम् आतुरस्य च विकार प्रशमनम्' अर्थात् स्वस्थ व्यक्ति के स्वास्थ्य की रक्षा और रोगी व्यक्ति के रोगों को दूर करना। यह आयुर्वेद का प्रमुख उद्देश्य माना गया है। आयुर्वेदानुसार कोई जीव या प्राणी या मनुष्य तभी स्वस्थ रह सकता है, जब वह शारीरिक रूप से, समाग्नि युक्त, त्रिदोष की समानावस्था से युक्त, समान धातु, मल और कर्म से प्रसन्नचित्त, मन एवं इन्द्रियों से युक्त हो। इसलिए मनुष्य को अपने स्वाभाविक परिस्थितियों के अनुसार अलग-अलग समयानुसार अलग स्थिति के अनुरूप अपने जीवन के क्रिया कलापों को करना चाहिए। यह जीवन यापन के क्रियाकलाप दिनचर्या, ऋतुचर्या, पथ्य आहार-विहार इत्यादि स्वस्थ वृत्त के लक्षण हैं। स्वस्थ वृत्त को दो वर्गों में विभाजित किया जा सकता है - वैयक्तिक और सामाजिक। आयुर्वेद मतानुसार वैयक्तिक स्वास्थ्य अधिक महत्त्वपूर्ण है, क्योंकि स्वस्थ मनुष्य ही स्वस्थ समाज का निर्माण कर सकता है और समाजिक कार्यो को कर और करा सकता है। इन सभी के लिए व्यक्ति को स्वस्थ रहना पड़ेगा और स्वस्थ रहने के लिए अर्थात् स्वास्थ्य की दृष्टि से दिनचर्या, रात्रिचर्या, ऋतुचर्या, आहार-विहार, पथ्य-अपथ्य इत्यादि का संयमपूर्वक पालन करना, व्यक्ति का नैतिक धर्म बन जाता है।

6.1 दिनचर्या

मनुष्य की दिनचर्या कैसी हो, उसमें क्या-क्या होना चाहिए, इन सभी प्रश्नों का उत्तर हमें आयुर्वेद के प्रायः सभी ग्रन्थों में प्राप्त हो जाता है। यथा- उठने का समय, शौच, दन्तधावन, अभ्यंग, स्नानादि आदि का उपयुक्त समय क्या हो? अब इनके विषय में संक्षिप्त चर्चा-विमर्श कर लेते हैं-

(i) उठने का समयः- प्रत्येक स्वस्थ मनुष्य को ब्रह्ममुहूर्त अर्थात् सूर्योदय से दो घंटे पूर्व अपनी शय्या को छोड़ देना चाहिए। उठने का यह समय अत्यधिक शुभ और उपयुक्त माना जाता है, क्योंकि ब्रह्ममुहूर्त में शरीर को स्वच्छ, सात्त्विक और प्रदूषण रहित वायु की प्राप्ति होती है। ब्रह्ममुहूर्त में उठना यह नियम निरोगी अर्थात् स्वस्थ व्यक्ति के लिए है। यदि व्यक्ति रोग ग्रस्त है, तो वह देर तक सो सकता है। प्रातः काल में शरीर, मन और बुद्धि स्वच्छ और निर्मल होते हैं, इस समय पढ़ा पाठ, अधिक समय तक स्मरण रहता है। ब्रह्म मुहूर्त के समय उठने पर नित्य कर्म करने से नित्य आयु की रक्षा होती है।

(ii) मलोत्सर्ग या मल त्याग करना:- शरीर की जीर्णाजीर्णता आदि की चिन्ता त्याग करके मल का त्याग मौन होकर करना चाहिए। प्रयत्नपूर्वक मलोत्सर्ग नहीं करना चाहिए। आज के भागदौड़ भरी जिन्दगी में नियमित रूप से मल का त्याग न करना, कई रोगों को पनपने का अवसर देते हैं, नियमित रूप से मल उत्सर्जन न होने के कई कारण भी है, यथा रात्रि में देर से खाना, अपच, नींद का न आना, तनावग्रस्त जीवन इत्यादि। मल का त्याग ठीक प्रकार से नहीं होने से गैस, सिरदर्द, थकान, कब्ज, सुस्ती सिने में दर्द इत्यादि विकारादि अत्यधिक शरीर को परेशान करते हैं। जो आगे चलकर गंभीर रोग का रूप लेकर मानव जीवन को कष्टसाध्य और दुष्कर बना देते हैं। यदि आप नियमित और प्रतिदिन मल का त्याग करते हैं, तो आपका शरीर स्वस्थ, पवित्र और दुर्गन्ध रहित होकर स्वच्छ हो जाता है। इसके लिए आपको उचित मात्रा में संतुलित आहार का सेवन करना चाहिए। यथा- घीया, तोरी, अंजीर, मुनक्का, रेशेदार-पत्तेदार सब्जियाँ इत्यादि।

(iii) मुख-प्रक्षालन:- मल का त्याग करने के पश्चात् अपने हाथों को अच्छी प्रकार साबुन से धोकर, स्वच्छ जल से अपने मुख, आँख, नाक, कान तथा चेहरे को अच्छी तरह धोना चाहिए और आचमन करना चाहिए। इससे सुस्ती का नाश और मुख की शुद्धि होती है। मुख धोने के लिए किसी भी प्रकार का दुर्गन्ध से युक्त, फेनयुक्त तथा क्षारीय पानी प्रयोग नहीं करना चाहिए।

(iv) दाँत साफ करना:- आयुर्वेद मतानुसार आक, वट, खैर, करुज, सर्ज, अर्जुन इत्यादि वृक्षों की या कषाय, कटु, तिक्त रस वाली, जिसका अग्रभाग कोमल हो, उसकी दातुन से प्रात: और भोजन के पश्चात् दातुन करना चाहिए।दातुन को कनिष्ठिका अंगुली के समान मोटी, सीधी तथा लम्बाई में 12 अंगुली होना चाहिए। दातुन के द्वारा किसी भी प्रकार से मसूढ़ों को हानि नहीं पहुँचानी नहीं चाहिए। लम्बी दातुन से चीरकर जिह्वा भी साफ करनी चाहिए। दाँतों की सफाई करते हुए दाँतों को सीधे-खड़े रूप में साफ करना चाहिए। दातुन के साथ चूर्ण या मञ्जन के रूप में तेजबल की लकड़ी का विधान भी कहा जाता है। अजीर्ण रोगी, वमनरोगी, ज्वर, श्वास, आदि रोगी को दातुन नहीं करना चाहिए। इसी प्रकार हृदय, नेत्र, सिर और कर्ण रोगी को भी दातुन नहीं करनी चाहिए।

आजकल दाँतों के लिए टूथब्रश और टूथपेस्ट का इस्तेमाल किया जाता है। किन्तु इनका सावधानी से गर्म पानी के साथ इस्तेमाल करना चाहिए। जिससे इनके साथ कोई रोग ही न हमारे दाँतों को हानि पहुँचा दे।

(v) अञ्जन कर्म:- प्रतिदिन स्वस्थ व्यक्ति को सौवीर अञ्जन आंखों में लगाना चाहिए। यह आँखों के लिए लाभदायक होता है। आँख तेज युक्त अर्थात् सूर्य का प्रतिनिधित्व करती है। आँखों को कफ से भय होता है। अतः कफ को निकालने के लिए रसाञ्जन का प्रयोग सात दिन में एक बार अवश्य करना चाहिए। अंजन का समय प्रातः काल ही होता है, किन्तु वैरेचनिक अंजन रात्रि में ही प्रयोग करनी चाहिए। आजकल काजल लगाने का चलन है, यह सरसों के तेल के दीये या घृत के दीये से बनता है, यह भी आँखों के लिए अच्छा होता है।

(vi) नस्य कर्मः- अञ्जन के पश्चात् नस्य कर्म का विधान है। नस्य के लिए अणु तैल का विधान किया जाता है। अणुतैल सिर के प्रत्येक अणु में नासिका के माध्यम से पहुँच जाता है, क्योंकि नाक को सिर का प्रवेशद्वार कहा गया है। सामान्यतः प्रावृट्, हेमन्त और वसन्त ऋतुओं में, नस्य कर्म को करना चाहिए।

आयुर्वेद मतानुसार कफ की प्रधानता होने पर प्रातः काल, पित्त की प्रधानता होने पर दोपहर और वात की प्रधानता होने पर सांयकाल में नस्य कर्म करने का निर्देश है। सिररोग, हिचकी, गला बैठने में प्रतिदिन प्रात:काल और सांयकाल नस्य दिया जाना चाहिए। इससे त्वचा, कन्धा, गला, उन्नत, स्वर स्निग्ध तथा इन्द्रियाँ निर्मल और स्वच्छ हो जाती है।

Lecture by-

Dr. Ritu Mishra

Department of Sanskrit

Shivaji College.